स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद

बनाम

राबो बैंक

(दीवानी अपील सं. 8194/2015)

01 अक्टूबर, 2015

[रंजन गोगोई तथा एन.वी. रमण, जे.जे.]

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 – आदेश 37 नियम 3 – संक्षिप्त प्रक्रिया - वादी बैंक द्वारा प्रतिवादी बैंक के विरुद्ध भुगतान दावा की उपयुक्तता - प्रतिवादी बैंक द्वारा भुगतान करने के दायित्व से इनकार – विचारण न्यायालय ने बचाव की अनुमति दिए बिना प्रतिवादी बैंक पर दायित्व तय करने के फैसले के लिए समन को पूर्ण कर दिया। अपीलीय न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय के आदेश की पुष्टि की गई – अपील पर अभिनिर्धारित किया गया - जहाँ प्रतिवादी एक विचारणीय मुद्दा या वाजिब प्रतिरक्षा उठाता है, प्रतिवादी बचाव के लिए बिना शर्त अनुमति का अधिकारी है, जब तक कि बचाव की व्यवस्था भ्रामक या दिखावटी न हो - वर्तमान मामले में, अभिलेख पर मौजूद सामग्री से पता चलता है कि निर्णय के लिए कुछ विचारणीय मुद्दे थे, जो प्रतिवादी द्वारा उठाए गए थे और इसलिए

प्रतिवादी बैंक दावे का बचाव करने के लिए बिना शर्त अनुमति प्राप्त करने का अधिकारी था।

न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए, अभिनिर्धारित किया गया -

1. जहां आदेश 37 की प्रयोज्यता स्वयं प्रश्न में है, बचाव के लिए अनुमति देने की अनुमति दी जा सकती है। न्यायालय को डिक्री पारित करने से पहले उसके परिणामों पर विचार करने का अधिकार है। संक्षिप्त मुकदमों से निपटने वाले न्यायालयों को दोनों पक्षों के हितों को ध्यान में रखते हुए बहुत सावधानी से कार्य करना चाहिए। केवल इस आधार पर कि प्रतिवादी अस्थिर और तुच्छ बचाव करके लंबी मुकदमेबाजी का सहारा ले सकता है, बचाव की अनुमति देने से इनकार नहीं किया जा सकता है। साथ ही, न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रतिवादी वास्तविक मुद्दा उठाए न कि कोई दिखावटी मुद्दा। न्यायालय अकल्पनीयता या असंगति के आधार पर बचाव को अस्वीकार नहीं कर सकता। बचाव के लिए अनुमति देने के निष्कर्ष को दर्ज करने से पहले, न्यायालय को तथ्यों का आकलन करना चाहिए और इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि यदि प्रतिवादी द्वारा हलफनामे में लगाए गए तथ्य स्थापित होते हैं, तो उन तथ्यों पर एक अच्छा या यहां तक कि एक प्रशंसनीय बचाव भी होगा।

नीभा कपूरी बनाम जयंतीलाल खण्डवाला 2008 (3) एससीसी 770: 2008(1) एससीआर 1012 – पर भरोसा किया गया।

टी. सुखेंदर रेड्डी बनाम एम. सुरेन्द्र रेड्डी 1998 (3) एएलडी 659 – संदर्भित किया गया।

2. ऐसे मामलों में जहां प्रतिवादी ने कोई विचारणीय मुद्दा या उचित बचाव उठाया है, प्रतिवादी बचाव के लिए बिना शर्त अनुमति का हकदार है। ऐसे मामलों में भी बचाव के लिए अनुमति दी जाती है, जहां किसी तथ्य का खुलासा करने पर प्रतिवादी के पास हालांकि बचाव का अभाव होता है, लेकिन यह सकारात्मक धारणा बनाता है कि मुकदमे में वादी के दावे के लिए बचाव स्थापित किया जाएगा। केवल उन मामलों में जहां बचाव व्यवस्था भ्रामक या दिखावटी या व्यावहारिक रूप से भ्रामक है, वादी को फैसले पर हस्ताक्षर करने की अनुमति देने का अधिकार है। (पेरा 17) (483-एफ़-एच)

संतोष कुमार बनाम भाई मूल सिंह एआईआर 1958 एससी 321: 1958 एससीआर 1211; मिल्खीराम (इंडिया) (पी) लिमिटेड बनाम चमनलाल ब्रदर्स एआईआर 1965 एससी 1698; मेचेलेक इंजीनियर्स एंड मैन्युफैक्चरर्स बनाम बेसिक इक्विपमेंट कार्पोरेशन **(1976) 4 एससीसी 687: 1977 (1) एससीआर 1060;** सुनील एंटरप्राइजेज एवं अन्य बनाम एसबीआई कमर्शियल एंड इंटरनेशनल बैंक

लिमिटेड **(1998) 5 एससीसी 354;** राज दुग्गल बनाम रमेश कुमार बंसल **1991 सप्ल.(1) एससीसी 191 – पर भरोसा किया गया।**

श्रीमती किरणमयी दासी बनाम डॉ. जे. चटर्जी एआईआर 1949 कैल 479 – संदर्भित किया गया।

3. मौजूदा मामले में, हमने मुख्य सतर्कता अधिकारी, एसबीएच के कहने पर सीबीआई द्वारा दर्ज की गई 9 अगस्त, 1999 की एफआईआर और सीबीआई द्वारा दायर आरोप पत्र सहित रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री का अवलोकन किया है। आरोप पत्र में अपीलकर्ता बैंक, बुरा बाजार शाखा, कलकत्ता के मुख्य प्रबंधक श्री सुधीर बेहरा की संलिप्तता का संकेत दिया गया। प्रतिवादी की शाखा भारतीय ग्राहकों के प्रतिनिधियों के अनुरोध पर कार्रवाई करते हुए, मुख्य प्रबंधक ने अपीलकर्ता बैंक के कुछ अधिकारियों को, जो विदेशी मुद्रा विभाग के प्रभारी थे, सह-स्वीकृति के परीक्षण किए गए टेलेक्स संदेश जारी करने के लिए प्रेरित किया था। आरोप पत्र में आगे आरोप लगाया गया है कि ये अधिकारी ऐसी सह-स्वीकृति जारी करने के लिए अधिकृत नहीं थे और उनकी अवैध और अनधिकृत कार्रवाई के पीछे का मकसद अपीलकर्ता बैंक के हितों को खतरे में डालकर प्रतिवादी की शाखा को अपने बिलों में छूट प्राप्त करने में सक्षम बनाना था। यह भी रिकार्ड में है कि उक्त मामले की सुनवाई 13 नवंबर, 2014 को साक्ष्य के स्तर पर थी।

4. उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच द्वारा व्यक्त विचारों के साथ हलफनामे में प्रतिवादी (अपीलकर्ता) के महत्वपूर्ण खुलासे यह स्पष्ट करते हैं कि निर्णय के लिए कुछ विचारणीय मुद्दे हैं और प्रतिवादी/अपीलकर्ता इसका हकदार है मुकदमे का बचाव करें. उच्च न्यायालय के अपीलीय पक्ष को अपना निष्कर्ष दर्ज करने से पहले मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर विचार करना चाहिए था। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि प्रतिवादी/अपीलकर्ता ने मुकदमे में विचारणीय मुद्दों का प्रथम दृष्टया मामला बनाया है, जिस पर निर्णय लेने की आवश्यकता है। इसलिए, प्रतिवादी मुकदमे का बचाव करने के लिए बिना शर्त अनुमति देने का हकदार है। अपीलकर्ता/प्रतिवादी को फैसले के लिए समन का बचाव करने के लिए बिना शर्त अनुमति दी जाती है। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश को पक्षों द्वारा उठाए गए सभी मुद्दों और इस न्यायालय द्वारा की गई किसी भी टिप्पणी को नए सिरे से निपटाना होगा।

<u>प्रकरण विधि संदर्भ</u>

एआईआर 1949 कैल 479	संदर्भित किया	पैरा 15
1958 एससीआर 1211	भरोसा किया	पैरा 16
1965 एससी 1698	रोसा किया	पैरा 16

1977 (1) एससीआर 1060	भरोसा किया	पैरा 16
(1998) 5 एससीसी 354	भरोसा किया	पैरा 16
2008(1) एससीआर 1012	भरोसा किया	पैरा 18
1998(3) एएलडी 659	संदर्भित किया	पैरा 19
1991 सप्ल.(1) एससीसी 191	भरोसा किया	पैरा 20

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: दीवानी अपील सं. 8194/2015

बॉम्बे उच्च न्यायालय की अपील सं. 415/2014 के संक्षिप्त वाद सं. 1586/2001 में निर्णय सं. 238/2008 के समन में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांकित 09-10-2014 में से

मुकुल रोहतगी, एजी, श्याम दीवान, ए.वी. रंगम, बडी ए. रंगनाधन, डी.वी. रघु वामसी अपिलार्थी के लिए।

राहुल नरीचनिया, सुनीता दत्त, प्रतीक्षा अवहद, ज्योति मेंदीरत्ता प्रतिवादी के लिए।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधीश **एन.वी. रमण, जे.** के द्वारा सुनाया गया।

अनुमति दी गई।

2. यह अपील संक्षिप्त में 2008 के निर्णय संख्या 238 के लिए समन से उत्पन्न 2014 की अपील संख्या 415 में बॉम्बे में न्यायिक उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच द्वारा पारित 9 अक्टूबर, 2014 के फैसले और डिक्री के खिलाफ निर्देशित की गई है। 2001 का मुकदमा संख्या 1586। उक्त निर्णय द्वारा, कहा गया कि उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच ने अपीलकर्ता/प्रतिवादी द्वारा की गई अपील को खारिज कर दिया, जिससे विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले को बरकरार रखा गया।

3. पक्षों के बीच विवाद का फैसला करने के लिए, सबसे पहले विवाद का फैसला करने की सीमा तक मामले के तथ्यों को सामने रखना आवश्यक है।

4. प्रत्यर्थी/वादी सिंगापुर में स्थित एक बैंकिंग संस्थान है और इसकी शाखा एम/एस ग्लोलैंड (सुदूर पूर्व) पीटीई लिमिटेड, प्रत्यर्थी/वादी ने अपीलकर्ता/प्रतिवादी के साथ व्यापारिक लेनदेन किया। प्रत्यर्थी की शाखा चने के निर्यात के व्यवसाय में लगा हुआ है और उसने अपने भारतीय ग्राहकों अर्थात् मेसर्स कोठारी ग्लोबल लिमिटेड और मेसर्स मरुधर एडिबल ऑयल्स लिमिटेड को एक खेप भेजी। अपने भारतीय ग्राहकों से कुल यूएस डॉलर 8,19,199.35 का भुगतान एकत्र करने के लिए प्रत्यर्थी/वादी को प्रासंगिक तीन दस्तावेज़ दिनांक 04.02.1998, 24.02.1998 और 13.07.1998 भेजे। बदले में प्रत्यर्थी/वादी ने उन दस्तावेजों को भुगतान के लिए

अपनी शाखा के भारतीय ग्राहकों को जारी करने की शर्त पर अपीलकर्ता/प्रतिवादी को भेज दिया। ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता/प्रतिवादी को प्रत्यर्थी के ग्राहकों से भुगतान नहीं मिला और इसलिए उन्होंने उन्हें दस्तावेज़ जारी नहीं किए।

5. 9 सितंबर, 1998 को प्रत्यर्थी/वादी ने अपीलकर्ता बैंक को एक फैक्स संदेश भेजा और पूछा कि क्या वे 170 दिनों के बाद देय विनिमय बिल (ड्राफ्ट) स्वीकार करेंगे, जिस पर अपीलकर्ता बैंक ने अपनी स्वीकृति व्यक्त की। तदनुसार, प्रत्यर्थी ने 9 सितंबर, 1998 को अपीलकर्ता बैंक के पक्ष में 8,19,198.75 अमेरिकी डॉलर की राशि के लिए चार विनिमय बिल भेजे। 21 सितंबर, 1998 को फिर से, प्रत्यर्थी ने के भारतीय ग्राहकों से वसूली के लिए 11,12,428.54 अमेरिकी डॉलर की राशि के लिए विनिमय बिलों के साथ दस्तावेजों का एक और सेट अपीलकर्ता बैंक को भेजा। संग्रहण अवधि ड्राफ्ट (विनिमय बिल) की तारीख के 170 दिन बाद निर्दिष्ट की गई थी। प्रत्यर्थी ने 23 अक्टूबर, 1998 को एक टेलेक्स संदेश द्वारा अपीलकर्ता बैंक को कुल 19,31,627.89 अमेरिकी डॉलर के विनिमय बिलों के विरुद्ध भुगतान उनके न्यूयॉर्क बैंक बैंकर्स ट्रस्ट कंपनी में 27 फरवरी, 1999 की नियत तारीख पर जमा करने का निर्देश दिया।

6. जब अपीलकर्ता बैंक ने देय तिथि समाप्त होने के बाद भी राशि नहीं भेजी, तो प्रत्यर्थी/वादी ने 9 मार्च, 1999 को अपीलकर्ता/प्रतिवादी को विलंब के

लिए 9.75% की दर से ब्याज सहित राशि जमा करने के लिए एक टेलेक्स संदेश भेजा। ऐसा प्रतीत होता है कि उसी दिन, अपीलकर्ता बैंक ने प्रतिवादी को इस आधार पर अपनी देनदारी से इनकार करते हुए जवाब दिया कि जिस ढंग और तरीके से लेनदेन हुआ वह व्यवसाय के सामान्य क्रम में नहीं था और एेसा प्रतीत होता है कि बुर्रा बाजार में इसकी कोलकाता शाखा द्वारा दी गई स्वीकृति बैंकों में प्रचलित प्रक्रिया की पूर्णतः अवहेलना है। प्रत्यर्थी को यह भी सूचित किया गया है कि मामला केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) को सौंप दिया गया है। इसके बाद 31 मार्च, 2001 तक दायित्व का आरोप लगाने और इनकार करने वाली पार्टियों के बीच विभिन्न पत्राचारों का आदान-प्रदान हुआ, उसी दिन प्रत्यर्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष 2001 का संक्षिप्त मुकदमा संख्या 1586 दायर किया।

7. विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अपीलकर्ता/प्रतिवादी पर दायित्व तय किया और 27 फरवरी, 1999 यानी विनिमय बिलों की परिपक्वता तिथि से मूल राशि की वसूली तक प्रतिवर्ष 9.75% की दर से ब्याज देने के फैसले के लिए सम्मन को पूर्ण कर दिया। इससे व्यथित होकर, प्रतिवादी/अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक अंतर-न्यायालय अपील दायर की, जिसे डिवीजन बेंच ने विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को बरकरार रखते हुए खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय के फैसले से संतुष्ट नहीं होने पर, अपीलकर्ता/प्रतिवादी ने विशेष

अनुमति के माध्यम से अपील दायर की। 15 दिसंबर, 2014 को इस न्यायालय ने नोटिस जारी करते हुए उच्च न्यायालय के विवादित आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगा दी।

8. भारत के विद्वान अटॉर्नी जनरल श्री मुकुल रोहतगी ने अपीलकर्ता बैंक की ओर से बहस करते हुए कहा कि एकल न्यायाधीश के साथ-साथ उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच द्वारा अपीलकर्ता बैंक पर दायित्व तय करना उचित नहीं था। ऐसे मामले में जहां 19,31,627.89 अमेरिकी डॉलर की बड़ी राशि शामिल है, अपीलकर्ता बैंक को अपने मामले का बचाव करने और लिखित बयान दाखिल करने के अवसर के अभाव में, उच्च न्यायालय के निर्णय को सही नहीं माना जा सकता है। उच्च न्यायालय के फैसले की आलोचना करते हुए, विद्वान अटॉर्नी जनरल ने तर्क प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी/वादी के पास आदेश 37, सीपीसी के तहत मुकदमा दायर करने का कोई वैध कानूनी कारण नहीं है। मुकदमा आदेश 37 1(ii)(बी)(i) के परीक्षण में योग्य नहीं है क्योंकि "लिखित अनुबंध" के संबंध में कोई विशिष्ट कथन नहीं था और वादी/प्रत्यर्थी द्वारा दिया गया कथन "एक" के संबंध में है समझौता"। अपीलकर्ता बैंक ने इस पर कोई विचार नहीं किया और केवल टेलेक्स/फैक्स संदेश पार्टियों के बीच एक लिखित अनुबंध का गठन नहीं करते हैं। विचाराधीन उपकरणों (विनिमय पत्र) पर अपीलकर्ता बैंक की ओर से "स्वीकृति" नहीं थी। परक्राम्य

लिखत अधिनियम के प्रावधान यह कहते हैं कि "स्वीकृति" अदाकर्ता/स्वीकर्ता द्वारा विनिमय बिल के ऊपर अपनी सहमति पर हस्ताक्षर करके दी जाएगी। हालाँकि, वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता बैंक की ओर से स्वीकृति का ऐसा कोई समर्थन मौजूद नहीं है, न ही स्वीकृति देने वाला कोई दस्तावेज़ संलग्न किया गया था। केवल अपीलकर्ता बैंक की ओर से कथित तौर पर जारी किए गए टेलेक्स/फैक्स संदेश, वादी/प्रत्यर्थी द्वारा किए गए दावे को जन्म नहीं दे सकते। ऐसी स्थिति में, प्रवर्तन धारा 23 के तहत परिकल्पित सार्वजनिक नीति का स्पष्ट उल्लंघन है अनुबंध अधिनियम के. अपीलकर्ता-बैंक के प्रधान कार्यालय ने पहले ही अपनी सभी शाखाओं को निर्देश दिया है कि वे बिलों की सह-स्वीकृति या अन्य बैंकों द्वारा स्वीकार किए गए बिलों की खरीद/छूट पर भी रोक लगा दें, जब तक कि अन्यथा बैंक के संबंधित नियंत्रण कार्यालय द्वारा एक विशिष्ट लिखित पुष्टि नहीं की जाती है। टेलेक्स/फैक्स संदेश, जिस पर प्रतिवादी भरोसा कर रहा है, अपीलकर्ता बैंक के अधिकार से जारी नहीं किए गए थे। यह पूरी तरह से प्रतिवादी की शाखा के ग्राहकों का प्रतिनिधित्व करने वाले कुछ व्यक्तियों द्वारा अपीलकर्ता-बैंक के कुछ अधिकारियों की मिलीभगत से किया गया शरारत का कार्य था, और उच्च न्यायालय को इस तथ्य की सराहना करनी चाहिए थी। विद्वान अटॉर्नी जनरल ने प्रतिवादी/अपीलकर्ता द्वारा दायर एक हलफनामे की ओर हमारा ध्यान आकर्षित

करते हुए मामले के तथ्यात्मक पहलुओं को गिनाते हुए संक्षिप्त मुकदमे का बचाव करने की अनुमति मांगी, प्रस्तुत किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने, प्रतिवादी के मामले को नजरअंदाज करते हुए, समन जारी करते हुए मुकदमे का फैसला सुनाया। निर्णय पूर्ण. उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने भी कानूनी आवश्यकताओं को उनके वास्तविक परिप्रेक्ष्य में न समझकर गंभीर त्रुटि की है और इसलिए निचली अदालतों के फैसले रद्द किए जाने योग्य हैं।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी/वादी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ने निचली अदालतों के फैसले का समर्थन किया और प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी/वादी ने निर्यातक एम/एस ग्लोलैंड (सुदूर पूर्व) पीटीई को भुगतान कर दिया है। लिमिटेड केवल अपीलकर्ता/प्रतिवादी के प्रतिनिधित्व के बाद ही विनिमय बिलों को स्वीकार करेगा। अपने अधिकारियों द्वारा अपने प्राधिकार से परे जाकर धोखाधड़ी के लगाए गए बेबुनियाद आरोप पर अपने दायित्व को पूरा न करने का अपीलकर्ता बैंक का आचरण न्याय के हित में नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय बैंकिंग गतिविधियाँ पार्टियों के बीच अंतर्निहित विश्वास पर चलती हैं और आंतरिक धोखाधड़ी का छोटा कारण दिखाकर जिम्मेदारी से बच नहीं सकते हैं। यहां तक कि अपीलकर्ता बैंक द्वारा दिखाए गए आंतरिक धोखाधड़ी के कारण भी दृढ़ता से आधारित नहीं हैं, क्योंकि अपीलकर्ता बैंक के वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा भेजे गए परीक्षण किए गए टेलेक्स

उनकी प्रामाणिकता सुनिश्चित करते हैं और यह अनुमान लगाते हैं कि संदेश बैंक के अधिकार के तहत भेजा गया था। वास्तव में, अपीलकर्ता बैंक ने प्रतिवादी की शाखा भारतीय ग्राहकों के अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता द्वारा विधिवत हस्ताक्षरित स्टांप पेपर पर क्षतिपूर्ति पत्र प्राप्त किया था, जिससे परीक्षण किए गए टेलेक्स संदेशों के लिए सह-स्वीकृति के संबंध में अपीलकर्ता बैंक को क्षतिपूर्ति मिली। विद्वान वरिष्ठ वकील ने अंततः कहा कि निचली अदालतों के निर्णयों में कोई स्पष्ट त्रुटि नहीं है और अपील खारिज किए जाने योग्य है।

10. पार्टियों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, हमारे विचार के लिए संक्षिप्त प्रश्न यह है कि क्या निचली अदालतें आदेश 37 नियम 3 के तहत परिकल्पित प्रतिवादी/अपीलकर्ता को बचाव की अनुमति दिए बिना संक्षिप्त मुकदमे पर फैसला देने में सही थीं।

11. हम सोचते हैं कि उक्त प्रश्न के निर्णय के लिए, सम्मन प्राप्त करने के बाद, अपीलकर्ता बैंक द्वारा बचाव की अनुमति मांगने के लिए दायर किए गए हलफनामे की जांच करना पहले उचित है। उक्त हलफनामे में, यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि विचाराधीन मुकदमा कानून के अनुसार संक्षिप्त सूट के रूप में चलने योग्य नहीं है। शाखा प्रबंधक और प्रत्यर्थी/अपीलकर्ता के प्रधान अधिकारी द्वारा दायर हलफनामे के पैरा 5 से 8 इस प्रकार हैं:

5) मैं कहता हूं कि वादी ने मार्च, 2001 में वर्तमान मुकदमा दायर किया है और उसमें निर्धारित विभिन्न राहतों के लिए प्रार्थना की है। इसके बाद वादी ने जून, 2001 के महीने में निर्णय के लिए समन को प्राथमिकता दी, जो कि 2001 के निर्णय संख्या 1305 के लिए समन था। मैं निर्णय के लिए उक्त समन के संबंध में रिकॉर्ड और कार्यवाही को संदर्भित करने और उन पर भरोसा करने की अनुमति चाहता हूँ। जब भी उत्पादन किया जाए।

6) इसके बाद वादी ने 24 फरवरी, 2003 को फैसले के लिए उक्त सम्मन को स्वतंत्रता के साथ वापस ले लिया। वादी उक्त संक्षिप्त वाद में संशोधन की कार्यवाही करने में विफल रहा है। वादी ने अप्रैल 2007 में 2007 के चैंबर समन नंबर 576 को निकाला, जिसमें संक्षिप्त सूट में विभिन्न संशोधनों की प्रार्थना की गई। इस प्रकार, उक्त चैंबर समन चार साल के अंतराल के बाद निकाला गया, जब वादी ने उक्त मुकदमे में फैसले के लिए समन को प्राथमिकता दी थी। इससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि वादी उक्त मुकदमे के तहत अपने अधिकारों पर मुकदमा चलाने में विफल रहा है और उपेक्षा की है और उक्त वाद में संशोधन के लिए चैंबर सम्मन निकालने में वादी की ओर से जानबूझकर देरी की गई है।

7) मैं कहता हूं कि वर्तमान मुकदमा संक्षिप्त सूट के रूप में चलने योग्य नहीं है। वर्तमान मुकदमा वादी द्वारा प्रतिवादी द्वारा कथित रूप से स्वीकार किए

गए विभिन्न विनिमय बिलों के संबंध में दायर किया गया है। मैं कहता हूं कि परक्राम्य लिखत अधिनियम के प्रावधानों और बैंकों द्वारा अपनाई जाने वाली प्रथा के अनुसार अदाकर्ता को विनिमय के बिल पर ही अपनी सहमति पर हस्ताक्षर करने की आवश्यकता होती है, न कि लिखत/दस्तावेज के किसी अन्य भाग पर। इसके अलावा, बिल सहित कथित बिल/मुकदमा दस्तावेज़ स्वीकार्य नहीं हैं क्योंकि उन पर स्टाम्प अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार मुहर नहीं लगाई गई है । यदि अदाकर्ता विनिमय बिल के अलावा किसी अन्य कागज पर अपना हस्ताक्षर करता है, तो इसे परक्राम्य लिखत अधिनियम के प्रावधानों के तहत स्वीकृति के रूप में नहीं माना जाएगा ।

8) वर्तमान मामले में, माना जाता है कि अदाकर्ता ने बिलों पर बिलों की सह-स्वीकृति दर्शाते हुए अपने हस्ताक्षर नहीं किए हैं। इसलिए प्रतिवादी के साथ-साथ अदाकर्ता द्वारा विनिमय के बिलों की कथित स्वीकृति उचित नहीं है और यह नहीं कहा जा सकता है कि विनिमय के उक्त बिल प्रतिवादी के साथ-साथ अदाकर्ता द्वारा भी विधिवत स्वीकार किए गए हैं।

12. इस प्रकार, अपीलकर्ता/प्रतिवादी ने उपरोक्त हलफनामे के माध्यम से यह दलील दी कि पार्टियों के बीच अनुबंध एक निष्कर्ष निकाला गया अनुबंध नहीं था और विचाराधीन मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित है। वर्तमान मुकदमे से पहले,

वादी/प्रत्यर्थी ने वर्ष 2001 में फैसले के लिए समन की मांग करते हुए एक और मुकदमा दायर किया था, लेकिन वर्ष 2003 में इसे वापस ले लिया। चार साल के अंतराल के बाद विभिन्न संशोधनों की मांग करने वाले चैंबर समन को बाहर निकालने के बाद ही वर्ष 2007 में वादी/प्रत्यर्थी ने कानून की प्रक्रिया में जानबूझकर देरी करने के इरादे से, संबंधित मुकदमे में फैसले के लिए सम्मन को प्राथमिकता दी। लगभग चार साल की इतनी बड़ी देरी स्पष्ट रूप से वादी की ओर से अपने अधिकारों की प्राप्ति में लापरवाही का संकेत देती है और चार साल का समय बीत जाने के बाद फिर से कार्यवाही शुरू करना स्पष्ट रूप से कानून का दुरुपयोग है। प्रतिवादी/अपीलकर्ता द्वारा आगे की दलील यह है कि मुकदमा केवल इस कारण से पोषणीय नहीं है कि बिलों पर अदाकर्ता द्वारा सहमति देने वाले कोई हस्ताक्षर नहीं हैं और न ही सह-स्वीकृति देने वाले प्रतिवादी के हस्ताक्षर हैं। इसके अलावा विधेयकों पर मोहर भी कानून के मुताबिक नहीं लगाई गई. प्रतिवादी/अपीलकर्ता द्वारा हलफनामे में स्पष्ट रुख अपनाया गया है कि परक्राम्य लिखत अधिनियम के प्रावधानों के तहत सहमति देने वाले अदाकर्ता के हस्ताक्षर विनिमय बिल के मुख पर ही चिपकाए जाने चाहिए और सभी बैंक समान सिद्धांत का पालन करते हैं । इसके अलावा, स्टाम्प अधिनियम के सिद्धांतों का पालन करते हुए बिलों पर मुहर नहीं लगाई जाती है ।

13. हमने शपथ पत्र में आगे देखा है कि प्रतिवादी ने आरोप लगाया है कि बिल जारी करने वाले और भुगतानकर्ता ने वादी बैंक के कुछ अधिकारियों की मिलीभगत से प्रतिवादी पर धोखाधड़ी की है और इस मुद्दे पर सीबीआई जांच भी लंबित है। प्रासंगिक रूप से, इस मामले पर भारतीय रिजर्व बैंक को भी सूचित किया गया है कि धोखाधड़ी हुई है। हलफनामे में उठाए गए मजबूत आरोप पर ध्यान देना भी महत्वपूर्ण है कि मुकदमे की समय सीमा बाधित होने के अलावा, जिन व्यक्तियों ने वाद-पत्र पर हस्ताक्षर किए थे, वे मुकदमा दायर करने के लिए अधिकृत या सशक्त नहीं थे।

14. मामले में एक और स्पष्ट पहलू यह है कि उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच ने अपने आदेश में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि अपीलकर्ता/प्रतिवादी ने वास्तव में विनिमय के बिलों पर अपनी स्वीकृति का समर्थन नहीं किया है। इस तरह के निष्कर्ष को दर्ज करने के बावजूद, उच्च न्यायालय ने माना कि अपीलकर्ता/प्रतिवादी विनिमय बिलों की कीमत पर भी देय राशि का भुगतान करने के लिए सहमत हो गया है, जो प्रत्यर्थी/वादी के पक्ष में डिक्री देने के लिए पर्याप्त है।

15. जहां तक प्रतिवादी को बचाव के लिए अनुमति देने की पात्रता का संबंध है, कानून बहुत पहले वर्ष 1949 में एस.एम. में स्थापित किया गया था।

किरणमयी दासी बनाम डॉ. जे. चटर्जी, एआईआर 1949 कैल 479, निम्नलिखित प्रस्तावों के रूप में: यदि प्रतिवादी न्यायालय को संतुष्ट करता है कि उसके पास गुण-दोष के आधार पर दावे का अच्छा बचाव है, तो वादी निर्णय पर हस्ताक्षर करने की अनुमति का हकदार नहीं है और प्रतिवादी बचाव के लिए बिना शर्त अनुमति का हकदार है।

यदि प्रतिवादी ने एक विचारणीय मुद्दा उठाया है जो दर्शाता है कि उसके पास निष्पक्ष या प्रामाणिक या उचित बचाव है, हालांकि सकारात्मक रूप से अच्छा बचाव नहीं है तो वादी निर्णय पर हस्ताक्षर करने का हकदार नहीं है और प्रतिवादी बचाव के लिए बिना शर्त अनुमति का हकदार है।

यदि प्रतिवादी ऐसे तथ्यों का खुलासा करता है जो उसे बचाव का अधिकार देने के लिए पर्याप्त समझे जा सकते हैं, तो कहने का तात्पर्य यह है कि यद्यपि हलफनामे ने सकारात्मक रूप से और तुरंत यह स्पष्ट नहीं किया है कि उसके पास बचाव है, फिर भी, तथ्यों का ऐसा चरण दिखाई देता है जो आगे बढ़ता है यह निष्कर्ष कि कार्रवाई के परीक्षण में वह वादी के दावे के लिए बचाव स्थापित करने में सक्षम हो सकता है, वादी निर्णय का हकदार नहीं है और प्रतिवादी बचाव के लिए अनुमति लेने का हकदार है, लेकिन ऐसे मामले में अदालत अपने

विवेकाधिकार परीक्षण के समय या तरीके के संबंध में शर्तें लगाता है, लेकिन अदालत में भुगतान करने या सुरक्षा प्रस्तुत करने के संबंध में नहीं।

यदि प्रतिवादी के पास कोई बचाव नहीं है या बचाव की व्यवस्था भ्रामक या दिखावटी या व्यावहारिक रूप से भ्रामक है तो आम तौर पर वादी निर्णय पर हस्ताक्षर करने के लिए अनुमति का हकदार है और प्रतिवादी बचाव के लिए अनुमति का हकदार नहीं है।

यदि प्रतिवादी के पास कोई बचाव नहीं है या बचाव भ्रामक या दिखावटी या व्यावहारिक रूप से भ्रामक है, तो हालांकि आम तौर पर वादी को फैसले पर हस्ताक्षर करने के लिए अनुमति देने का अधिकार है, अदालत केवल बचाव को आगे बढ़ने की अनुमति देकर वादी की रक्षा कर सकती है यदि दावा की गई राशि का भुगतान अदालत में किया जाता है। या अन्यथा सुरक्षित किया जाए और प्रतिवादी को ऐसी शर्त पर अनुमति दी जाए, और इस प्रकार प्रतिवादी को बचाव साबित करने का प्रयास करने में सक्षम बनाकर उस पर दया की जाए।

16. यह भी देखा गया है कि ऊपर बताए गए कानून का कई मामलों में न्यायालयों द्वारा पालन किया गया है [यह भी देखें: संतोष कुमार बनाम भाई मूल सिंह, एआईआर 1958 एससी 321, मिल्खीराम (इंडिया) (पी) लिमिटेड बनाम चमनलाल ब्रदर्स, एआईआर 1965 एससी 1698, मेचेलेक इंजीनियर्स एंड

मैन्युफैक्चरर्स बनाम बेसिक इक्विपमेंट कार्पोरेशन, (1976) 4 एससीसी 687 और सुनील एंटरप्राइजेज एवं अन्य बनाम एसबीआई कमर्शियल एंड इंटरनेशनल बैंक लिमिटेड (1998) 5 एससीसी 354]

17. उपरोक्त सिद्धांतों के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे मामलों में जहां प्रतिवादी ने कोई विचारणीय मुद्दा या उचित बचाव उठाया है, प्रतिवादी बचाव के लिए बिना शर्त अनुमति का हकदार है। ऐसे मामलों में भी बचाव के लिए अनुमति दी जाती है, जहां किसी तथ्य का खुलासा करने पर प्रतिवादी के पास हालांकि बचाव का अभाव होता है, लेकिन यह सकारात्मक धारणा बनाता है कि मुकदमे में वादी के दावे के लिए बचाव स्थापित किया जाएगा। केवल उन मामलों में जहां बचाव व्यवस्था भ्रामक या दिखावटी या व्यावहारिक रूप से भ्रामक है, वादी को फैसले पर हस्ताक्षर करने की अनुमति देने का अधिकार है।

18. जहां तक सीपीसी के आदेश 37 के तहत मुकदमे की पोषणीयता का सवाल है, इस न्यायालय ने नीभा कपूरी बनाम में यह फैसला सुनाया है। जयंतीलाल खंडवाला, 2008 (3) एससीसी 770 में पाया गया कि जहां आदेश 37 की प्रयोज्यता स्वयं प्रश्न में है, बचाव के लिए अनुमति देने की अनुमति दी जा सकती है। न्यायालय को डिक्री पारित करने से पहले उसके परिणामों पर विचार करने का अधिकार है। संक्षिप्त मुकदमों से निपटने वाले न्यायालयों को दोनों पक्षों

के हितों को ध्यान में रखते हुए बहुत सावधानी से कार्य करना चाहिए। केवल इस आधार पर कि प्रतिवादी अस्थिर और तुच्छ बचाव करके लंबी मुकदमेबाजी का सहारा ले सकता है, बचाव की अनुमति देने से इनकार नहीं किया जा सकता है। साथ ही, न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रतिवादी वास्तविक मुद्दा उठाए न कि कोई दिखावटी मुद्दा। न्यायालय अकल्पनीयता या असंगति के आधार पर बचाव को अस्वीकार नहीं कर सकता। बचाव के लिए अनुमति देने के निष्कर्ष को दर्ज करने से पहले, न्यायालय को तथ्यों का आकलन करना चाहिए और इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि यदि प्रतिवादी द्वारा हलफनामे में लगाए गए तथ्य स्थापित होते हैं, तो उन तथ्यों पर एक अच्छा या यहां तक कि एक प्रशंसनीय बचाव भी होगा।

19. हालाँकि हलफनामा सकारात्मक रूप से और तुरंत यह स्पष्ट नहीं करता है कि उसके पास बचाव था, फिर भी, यह तथ्यों की ऐसी स्थिति दिखाता है जिससे यह अनुमान लगाया जाता है कि कार्रवाई के परीक्षण में, प्रतिवादी बचाव स्थापित करने में सक्षम हो सकता है वादी का दावा वादी फैसले का हकदार नहीं है और प्रतिवादी बचाव के लिए अनुमति का हकदार है, लेकिन ऐसे मामले में न्यायालय अपने विवेक से सुनवाई के समय या तरीके के संबंध में शर्तें लगा

सकता है, लेकिन न्यायालय में भुगतान के संबंध में नहीं। सुरक्षा प्रदान करना [देखें: टी. सुखेंदर रेड्डी बनाम एम. सुरेंद्र रेड्डी, 1998 (3) एएलडी 659]।

20. हम राज दुग्गल बनाम रमेश कुमार बंसल, 1991 सप्ल. (1) एससीसी 191 मामले में इस न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से पूरी तरह सहमत हैं कि फैसले के लिए समन का बचाव करने की अनुमति हमेशा प्रतिवादी को दी जाएगी जब उन दस्तावेजों के अर्थ या शुद्धता के बारे में कोई विचारणीय मुद्दा हो जिन पर दावा आधारित है या कथित तथ्य ऐसी प्रकृति के हैं जो प्रतिवादी को वादी या उसके गवाहों से पूछताछ या जिरह करने का अधिकार देते हैं।

21. मौजूदा मामले में, हमने मुख्य सतर्कता अधिकारी, एसबीएच के कहने पर सीबीआई द्वारा दर्ज की गई 9 अगस्त, 1999 की एफआईआर और सीबीआई द्वारा दायर आरोप पत्र सहित रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री का अवलोकन किया है। आरोप पत्र में अपीलकर्ता बैंक, बुरा बाजार शाखा, कलकत्ता के मुख्य प्रबंधक श्री सुधीर बेहरा की संलिप्तता का संकेत दिया गया। प्रतिवादी की शाखा भारतीय ग्राहकों के प्रतिनिधियों के अनुरोध पर कार्रवाई करते हुए, मुख्य प्रबंधक ने अपीलकर्ता बैंक के कुछ अधिकारियों को, जो विदेशी मुद्रा विभाग के प्रभारी थे, सह-स्वीकृति के परीक्षण किए गए टेलेक्स संदेश जारी करने के लिए प्रेरित किया था। आरोप पत्र में आगे आरोप लगाया गया है कि ये अधिकारी ऐसी सह-स्वीकृति

जारी करने के लिए अधिकृत नहीं थे और उनकी अवैध और अनधिकृत कार्रवाई के पीछे का मकसद अपीलकर्ता बैंक के हितों को खतरे में डालकर प्रतिवादी की शाखा को अपने बिलों में छूट प्राप्त करने में सक्षम बनाना था। यह भी रिकार्ड में है कि उक्त मामले की सुनवाई 13 नवंबर 2014 को साक्ष्य के स्तर पर थी।

22. इनके अलावा, उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच द्वारा व्यक्त विचारों के साथ हलफनामे में प्रतिवादी (अपीलकर्ता) के महत्वपूर्ण खुलासे यह स्पष्ट करते हैं कि निर्णय के लिए कुछ विचारणीय मुद्दे हैं और प्रतिवादी/अपीलकर्ता इसका हकदार है मुकदमे का बचाव करें. उच्च न्यायालय के अपीलीय पक्ष को अपना निष्कर्ष दर्ज करने से पहले मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर विचार करना चाहिए था। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि प्रतिवादी/अपीलकर्ता ने मुकदमे में विचारणीय मुद्दों का प्रथम दृष्टया मामला बनाया है, जिस पर निर्णय लेने की आवश्यकता है। इसलिए, प्रतिवादी मुकदमे का बचाव करने के लिए बिना शर्त अनुमति देने का हकदार है।

23. यद्यपि दोनों पक्षों द्वारा कुछ अन्य मुद्दे उठाए गए हैं, हमारे निष्कर्ष के मद्देनजर कि प्रतिवादी/अपीलकर्ता मुकदमे का बचाव करने के लिए अनुमति का हकदार है, हमें इस स्तर पर अन्य मुद्दों पर जाना आवश्यक नहीं लगता है। जहां तक प्रत्यर्थी/वादी की ओर से दी गई दलील का संबंध है कि अपीलकर्ता बैंक द्वारा

यह कहते हुए दायित्व से इनकार कर दिया गया कि अपीलकर्ता बैंक के विदेशी मुद्रा विभाग के प्रभारी अधिकारी बिलों को सह-स्वीकृति देने के लिए अधिकृत नहीं थे और इस तरह अधिकारियों द्वारा धोखाधड़ी का आरोप लगाना बरकरार नहीं रखा जा सकता क्योंकि ये प्रतिवादी बैंक के आंतरिक मामले हैं जिसके लिए वादी/प्रत्यर्थी को दंडित नहीं किया जा सकता है और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार प्रथाओं और बैंकिंग नियमों का सम्मान किया जाना चाहिए, इस न्यायालय को इस बारे में विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है। इन मुद्दों का सम्मान करते हुए जब हम एक अपरिवर्तनीय निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अपीलकर्ता/प्रतिवादी मुकदमे का बचाव करने का हकदार है। इसलिए, हम इनमें से किसी भी मुद्दे पर निष्कर्ष देने में अनिच्छुक हैं जो मुकदमे की सुनवाई पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है।

24. तदनुसार, हम निचली अदालतों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को रद्द करके अपील की अनुमति देते हैं। अपीलकर्ता/प्रतिवादी को फैसले के लिए समन का बचाव करने के लिए बिना शर्त अनुमति दी जाती है। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश को पक्षों द्वारा उठाए गए सभी मुद्दों और इस न्यायालय द्वारा की गई किसी भी टिप्पणी को नए सिरे से निपटाना होगा। इस अपील से निपटना इस न्यायालय की अभिव्यक्ति के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए। हालाँकि, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

कल्पना के. त्रिपाठी अपील मंजूर की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी पवन कुमार बिश्नोई (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।